YKING BOOKS
ISSN 2456-3455

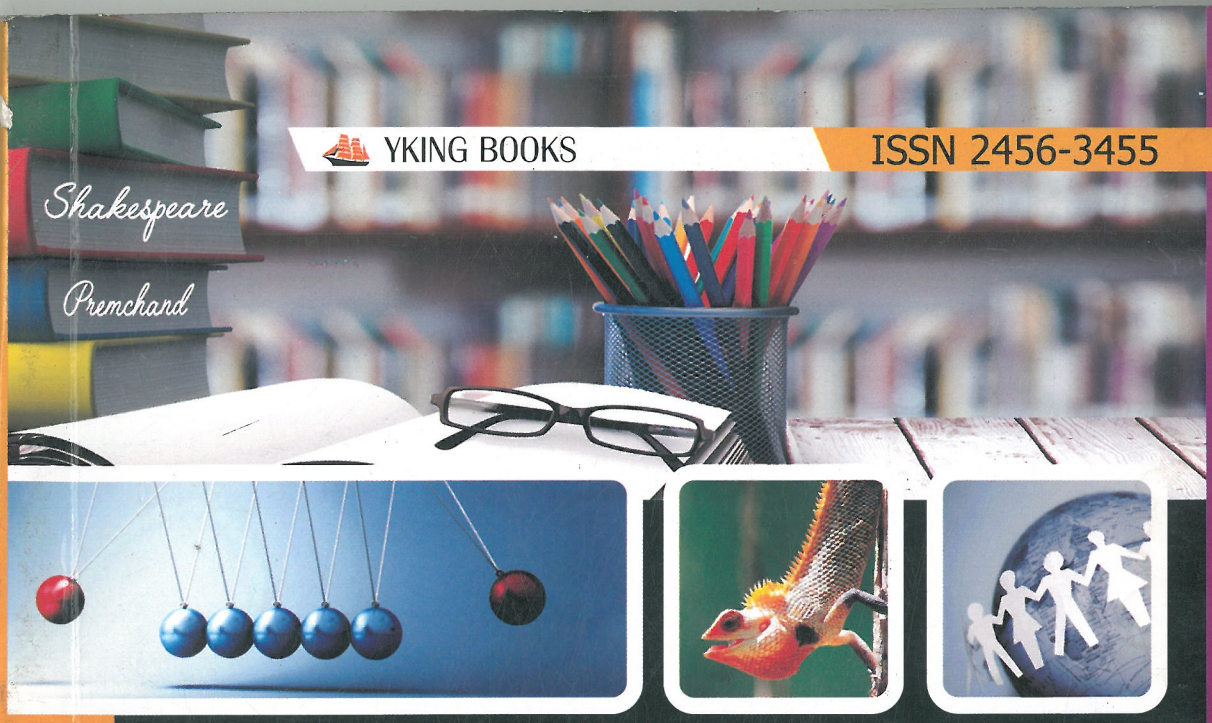

RESEARCH EXPRESSION

Bi-Annual Peer Reviewed Multi-Disciplinary Journal

Vol. 1/Issue 1-September 2016

Dr. Qamar Talat
Editor

Dr. Surendra Kumar Rajput
Principal/Patron

RESEARCH EXPRESSION Dr. Surendra Kumar Rajput Principal/Patron • Dr. Qamar Talat Editor

Contents

A. Humanities

1. उपन्यास का युग — 1
   —**शंभुनाथ**
2. इक्कीसवीं सदी : हिन्दी काव्य संभावनाएँ (संक्षेप) — 6
   —**राजन यादव**
3. Teaching English Writing Skills to Engineering Students: Challenges and Approaches — 15
   —**Sanjay Kumar Singh, Prashant Mishra, Amitabh Dubey**
4. Cross-cultural Collisions and the Notions of Nationhood in Amitav Ghosh's Novel *The Shadow Lines* — 22
   —**Ajaz Ahmad Hajam**
5. Gender Biasness and Inter-generational Gap in Monica Ali's *Brick Lane* — 28
   —**Shomaila Mahmood Khan**
6. Framing the Colonial Nightmare through a Dream: Magical Realism as a Post-colonial Narrative Mode in Derek Walcott's *Dream on Monkey Mountain* — 35
   —**L. Santhosh Kumar**
7. Nature as a Medium of Mysticism in Tagore's *Poems* — 39
   —**Chandra Shekhar Sharma**

B. Social Science

8. Education Effect on Rural Customers' Perception for Life Insurance Services — 45
   —**Sapana Sharma Saraswat, Rajeev Kumar Shukla**
9. जनजातीय महिलाओं के विरुद्ध घरेलू हिंसा — 52
   —**महेश शुक्ला**
10. समाज में नृत्य का बदलता स्वरूप : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण — 59
    —**अमरनाथ शर्मा, सुचित्रा शर्मा**
11. हिंदी माध्यम शिक्षा में नवाचार की आवश्यकता : एक मूल्यांकन — 64
    —**हेमलता बोरकर वासनिक**

RESEARCH EXPRESSION ISSN 2456-3455 Vol. 1, Issue 1, September 2016

समाज में नृत्य का बदलता स्वरूप : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

अमरनाथ शर्मा[a], सुचित्रा शर्मा[b]*

a. समाजशास्त्र विभाग, इंदिरा गाँधी शासकीय महाविद्यालय, वैशालीनगर, भिलाई, (छ.ग.)

b. समाजशास्त्र विभाग, शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

सारांश

भावनाओं की अभिव्यक्ति के कई साधन हैं। व्यक्ति जिन्हें अपने–अपने तरीके से व्यक्त करता है। कभी बोलकर, गाकर और कभी नृत्य के माध्यम से। इन सबमें नृत्य ही एक ऐसा माध्यम है, जिसमें भावनाओं की सशक्त प्रस्तुति अपनी आंगिक भाव आंगिकाओं द्वारा की जाती है। आरंभिक मानव ने अपनी सहज क्रियाएँ, प्रतिक्रियाएँ, प्रकृति से संबंध, अनुकरण, अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति, नये प्रयोग, नई खोज और नई सोच जैसी प्रक्रियाओं से स्वयं को विकास की परम्परा से जोड़ा। अपनी कल्पना और सृजनात्मक शक्ति से ही नृत्य प्रकृति से समाज में एक मूर्त रूप ले सका। भले ही पूर्व में उसकी शारीरिक क्रियाएँ संतुलित नहीं थीं पर धीरे–धीरे सतत् प्रयोग से स्पष्टता विकसित होती गई।

अपने मन के भावों को समझाने के लिए, ध्वनि और आंगिक क्रियाएँ धीरे–धीरे संशोधित होकर एक नये रूप में बदलती और निखरती गईं। संप्रेषणीयता का इससे अच्छा और क्या रूप हो सकता था। अपनी प्रारंभिक अवस्था से निकलकर नृत्य नियमबद्ध और कलात्मकता की ओर चला तब इसका सशक्त शास्त्रीय रूप विकसित हुआ जो राजकीय घरानों में प्रदर्शित हुआ। प्राचीन काल से ही विभिन्न अवसरों पर नृत्य के आयोजन होते रहे हैं। पहले यह केवल कुछ खास वर्ग तक ही सीमित था। राजमहल, रजवाड़ों अथवा राजघरानों में नर्तक एवं नर्तकियाँ हुआ करती थीं, जो सभासदों और राजा के मनोरंजन हेतु नृत्य किया करते थे। जिसके प्रमाण हमें तत्कालीन शिलालेखों और पुरातात्विक सामग्री में मिलते हैं। तब नृत्य सार्वजनिक रूप से मान्य और प्रतिष्ठित नहीं था। नृत्य में संलग्न लोगों के लिये 'नचनियाँ' शब्द का प्रयोग किया जाता था। प्रस्तुत शोध आलेख में नृत्य के संबंध में प्राप्त सामग्री के आधार पर मानव–शास्त्रीय तथा समाजशास्त्रीय अध्ययनों का विश्लेषण कर नृत्य को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास किया है।

बीज शब्दः–नृतत्वशास्त्र, सस्कृति, शिलालेख, प्रलेखित सामग्री, सुरक्षावाल्व।

भूमिका

नृत्य स्व एवं भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति है, जो चेहरे और शरीर, दोनों के भौतिक तालमेल से संपादित होने वाली गतिविधि है। पिछली कई शताब्दियों से आदिमानव से लेकर आधुनिक मनुष्य तक नृत्य विभिन्न संस्कृतियों का हिस्सा रहा है, जहाँ कि नृत्य व्यक्ति की विभिन्न

*Corresponding Author: Email: suchitrasharma12@gmail.com
Mobile No. 9977659302

इच्छाओं और प्रेरणाओं की पूर्ति के माध्यम से व्यक्त होता था। भले ही उसके रूप अलग–अलग रहे। रंगमहल, राजमहल रजवाड़े और राजघराने तथा गणिकाघरों में नाचने वाली नर्तकियाँ होती थीं जो अपनी नृत्यकला और भावभंगिमाओं से सभासदों का मनोरंजन किया करती थीं। समय के साथ नृत्य लोक जीवन के साथ शास्त्रीय रूप में राज जीवन में परिलक्षित होने लगा। नर्तकों द्वारा किया गया नृत्य मनोरंजन की दृष्टि से ज्यादा प्रयोग होने लगा। तब एक समय ऐसा भी आया जब नृत्य कला के प्रति लोगों की मनोवृत्ति बदलने लगी। नर्तकों को 'नचनियाँ' और उनके द्वारा किये गये नृत्य को हेय दृष्टि से देखा जाने लगा। नृत्य के इस तरह स्थान बदलने से अनादर का भाव उत्पन्न हुआ। सामान्यजन के बीच नृत्य के प्रति कोई उदारभाव नहीं था। तब से लेकर आज तक नृत्य को प्रतिष्ठित रूप प्राप्त करने में एक लंबी और संघर्षपूर्ण यात्रा करनी पड़ी है।

अभिव्यक्ति की प्रेरणा का सबसे अहम् स्रोत प्रकृति है। जिसने निश्चित रूप से मनुष्य को प्रेरित किया। मनुष्य ने उन भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कुछ आंगिक चेष्टायें कीं, जो कालांतर में स्वाभाविक लयात्मक प्रस्तुति का रूप लेने लगीं। कंठ से निकली अस्पष्ट ध्वनियाँ चुटकी, ताली तथा अन्य आंगिक क्रियाओं के रूप में नृत्य का एक आकार लेने लगा। अनेक आदिम समुदायों के अध्ययनों के अवलोकन से इस बात की पुष्टि होती है। आदिवासियों के द्वारा की गई प्रस्तुति प्रकृति और मनुष्य के आपसी और लयात्मक संबंधों की झलक है। मानव ने अपनी प्रारंभिक अवस्था में यह अनुभव किया होगा कि हर्ष–उल्लास, आशा–निराशा की स्थिति में आंगिक क्रियाएँ भिन्न–भिन्न होती हैं। कंकड़ों, लकड़ी के टुकड़ों, कोई खोखली लकड़ी से जो आवाजें निकलीं उसने मनुष्य को इच्छा आरै वस्तु के बीच तारतम्यता बनाने में मदद की।

इस तरह आरंभिक मानव ने अपनी सहज क्रियाएँ, प्रतिक्रियाएँ, प्रकृति से संबंध, अनुकरण, अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति, नये प्रयोग, नई खोज और नई सोच जैसी प्रक्रियाओं से स्वयं को विकास की परम्परा से जोड़ा। अपनी कल्पना और सृजनात्मक शक्ति से ही नृत्य प्रकृति से जुड़कर समाज में एक मूर्त रूप ले सका। भले ही पूर्व में उसकी शारीरिक क्रियाएँ संतुलित नहीं थीं पर धीरे–धीरे सतत् प्रयोग से स्पष्टता विकसित होती गई।

आदिवासी समुदायों में नृत्य का प्रदर्शन जरूर किया जाता रहा। हम देखते हैं कि कई आदिवासी नृत्य कुछ समानताएँ लिए हुए मिलते हैं। अलग–अलग क्षेत्रों में यह अपने–अपने अंदाज में किया जाता था। अपने मन के भावों को समझाने के लिए, ध्वनि और आंगिक क्रियाएँ धीरे–धीरे संशोधित होकर एक नये रूप में बदलती और निखरती गईं। संप्रेषणीयता का इससे अच्छा और क्या रूप हो सकता था।

आज के परिप्रेक्ष्य में नृत्य हमारी जिंदगी में विभिन्न भावनाओं की अभिव्यक्ति का लोकप्रिय माध्यम है जिसका उदाहरण हमारी सांस्कृतिक विशेषताओं, समाचार पत्र पत्रिकाओं, रंगमंच तथा दूर दर्शन पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रम हैं। **डेविड** ने अपने आलेख How Does Dance Benefit Society' Dec. 14, 2010 में लिखा है– ''मैं यह विश्वास करता हूँ कि लोगों को नृत्य में भाग लेने से जो पहचान और प्रेरणा मिलती है, इससे उनका जीवन वास्तव में सकारात्मक लाभों से भर जाता है।'' इस तरह नृत्य समाज का ही एक उत्पाद है जो कि हमारे मन में चल रहे विचार, इच्छाओं और प्रेरणाओं का मूर्त रूप है। कभी यह कलात्मक रूप से, कभी कोई चिकित्सकीय कार्य अथवा कभी कोई रीति–रिवाज हो, के प्रदर्शन हेतु नृत्य का आयोजन किया

जाता रहा है। यही नहीं कभी सुरक्षात्मक वाल्व के रूप में प्रयोग किया जाता था। ऐसे कई प्रसंग और विवरण मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि नृत्य अपने शास्त्रीय और व्यावहारिक रूप से संपादित होता रहा है। आदिम समाजों में तो नृत्य उनके धार्मिक क्रिया–कलापों के लिए किया जाता रहा चाहे वह देवता को प्रसन्न करना हो, बलि देना हो या जादू–टोना हो, हर अवसर पर आदिवासी नृत्य करते रहे हैं।

अध्ययन का उद्देष्य

प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से नृत्य से संबंधित प्राप्त द्वैतीयक सामग्री का विश्लेषण किया गया है जिसके अंतर्गत मानवशास्त्र एवं समाजशास्त्र में किये गये कुछ अध्ययनों के माध्यम से नृत्य की बदलती भूमिका पर प्रकाश डाला गया है।

ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

बहुत हद तक विस्तृत अर्थों में नृत्य को लेकर मानवशास्त्र में नृत्य संबंधी–दस्तावेज और प्रलेख मिलते हैं, जबकि समाजशास्त्र में नृत्य या इस विधा से संबंधित साक्ष्य नहीं मिलते। विभिन्न संस्कृतियों का अध्ययन करने वाले विज्ञान सांस्कृतिक मानवशास्त्र में इस संबंध में कुछ अध्ययन किये गये हैं, जिन्हें निम्न आयामों में देखा व समझा जा सकता है–

1. नृत्य समाज की ही उपज है।
2. सामाजिक नियन्त्रण का एक अंग है जिसके लिए एक विशेष शैक्षिक तकनीक की जरूरत होती है।
3. नृत्य क्रिया के दौरान भावनाओं का एक अच्छा प्रबंधन होता है।
4. व्यक्तिगत रूप से नृत्य और संगीत की शक्ति एक नैतिक ताकत के रूप में क्रिया करती है।
5. एकता को पैदा करने की शक्ति के रूप में नृत्य निर्धारित होता है।
6. नृत्य का एक आयाम एक संचित प्रक्रिया है।
7. नृत्य के माध्यम से एक चढ़ाव प्रतिस्पर्धा प्रदर्शित होती है
8. नृत्य एक धार्मिक प्रक्रिया है जो समुदाय के अस्तित्व के साथ प्रदर्शित होती है।

इस तरह नृत्य पूरे समाज में विशिष्ट भावनाओं को प्रदर्शित करने का माध्यम है। चूँकि मानवशास्त्र में इस विधा को लेकर काफी अध्ययन किये गये हैं, जिनका वर्णन यहाँ प्रासंगिक है।

मानवशास्त्रियों द्वारा किये गये अध्ययन

प्राचीन काल से ही नृत्य हमारी जिंदगी की विभिन्न भावनाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम रहा है, जो समय–समय पर विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के प्रदर्शन से व्यक्त किया जाता रहा। जिसका प्रमाण हमें प्राप्त साहित्यिक एवं पुरातात्विक सामग्री के अवलोकन से मिलता है। मानवशास्त्र में इस विधा के उद्गम और प्रकार्य को लेकर काफी अध्ययन मिलते हैं।

सांस्कृतिक मानवशास्त्र में विभिन्न प्राचीन संस्कृतियों का अध्ययन किया जाता है। अध्ययनकर्ताओं का मानना था कि भाषा और संस्कृति के विकास के साथ नृत्य के प्रति समाज की मनोवृत्ति में परिवर्तन आया और वह धीरे–धीरे समाज में स्वीकृत होने लगा। **प्रकार्यवादी विचारकों** ने

अपने अध्ययनों में इसे सामाजिक नियन्त्रण के अंग के रूप स्वीकार किया, जिसके लिए एक विशेष प्रकार के शैक्षिक तकनीक की जरूरत होती है।

जॉन लॉक (1693) में पाया कि 'नृत्य का प्रभाव मात्र कोई गतिपूर्ण कार्य नहीं बल्कि एक वैचारिकता है, जो बच्चों में आत्मविश्वास पैदा करती है।'' दक्षिण अफ्रीका के वेड्डा लोगों में 1 से 4 साल के अभ्यास से नृत्य में पारंगतता आती है ताकि सीखे हुए व्यवहार को संचारित किया जा सके।

इवान्स प्रिचर्ड और मारग्रेड मीड ने दक्षिण अफ्रीका के एजेंडे बीयर (Azande Bear Dance) नृत्य और समोआ बच्चों के औपचारिक नृत्य के अध्ययन के आधार पर सुझाव दिया कि नृत्य उनके ऊपर बड़ों द्वारा की गई अधीनता को व्यक्त करने का साधन है।

हार्टविंग और ग्लकमैन ने अपने अध्ययन में पाया कि नृत्य तनाव से मुक्ति दिलाता है। यह अध्ययन दक्षिण अफ्रीका में 'स्वाजी फल महोत्सव', जो कि तनाव मुक्ति के प्रतीक नृत्य के रूप में किया जाता है, पर आधारित है।

रेडक्लिफ ब्राउन ने अपने अंडमान आइलैंड के विश्लेषण में पाया कि वैयक्तिक रूप से नृत्य और संगीत की शक्ति एक नैतिक ताकत है अंडमान के आदिवासी नर्तकों और गायकों के प्रदर्शन से ऐसा प्रतीत होता हैं, जैसे वे एक शरीर हों। उनके शरीरों का एक दूसरे के साथ संयोजन ही इस तरह संपादित होता था। इस बात की पुष्टि **हरबर्ट स्पेन्सर** के समाज में कला के अचेतन संचार की प्रासंगिकता के विश्लेषण से होती है।

समाजशास्त्रियों द्वारा किये गये अध्ययन

कुछ अध्ययन समाजशास्त्रियों द्वारा भी किये गये। नृत्य समाज की ही एक ऐसी उपज है जो सामाजिक गतिविधियों और क्रियाकलापों से जन्म लेता है। नृत्य एकता की शक्ति पैदा करने का साधन है जो समुदाय की विभिन्न गतिविधियों के संपादन में व्यक्त होता है, चाहे वह धार्मिक कृत्य हो, कोई उत्सव, कोई अलोकिक जादुई क्रिया हो। शरीर और मन का सधा हुआ संतुलन संयुक्त क्रिया के रूप में प्रदर्शित किया जाता है। इन अवसरों पर नृत्य कभी सुरक्षा वाल्व के रूप में, कभी चिकित्सकीय समाधान और कभी कला की विधा के रूप में समाज में परिलक्षित होने लगा।

नृत्य के दौरान आपसी अन्तःक्रिया द्वारा भावनाओं का प्रबंधन किया जाता है। 1857 में **हरबर्ट स्पेन्सर** ने अपने ''संगीत के उद्‌भव और प्रकार्य'' के सिद्धान्त में भावनाओं के संचरण और सहानभूति पैदा करने में संगीत के महत्व को स्पष्ट किया। उन्होंने पाया कि ''समाज नृत्य से प्राप्त सामग्री और खुशी के शिक्षण से खुद को आन्तरीकृत कर लेता है।'' इस तरह नृत्य और समाज के आपसी संबंध 'एक दूसरे के पूरक रहे हैं।' नृत्य समाज के विकास के साथ चित्रों और कहानियों के माध्यम से संदेश प्रेषण का भी माध्यम बना।

दुर्खीम ने अपने आदिम समुदाय (वारन्गुआ) के अध्ययन में पाया कि धार्मिक गतिविधियों के संपादन में, कुल देवता को रिझाने के लिए आदिवासी नृत्य करते हैं। यह नृत्य का एक दृष्टिकोण था जो पुनर्जन्म के सिद्धान्त पर आधारित था। उन्होंने आस्ट्रेलियन आदिवासियों की एक सामूहिक नृत्य प्रस्तुति में पाया कि उनके द्वारा किया गया नृत्य देखने से ऐसा लगता था मानों बिजली सी निकल रही हो।

विक्टर टर्नर (1969) ने अपने अध्ययन में पाया कि किसी भी समाज में जहाँ सामाजिक असमानता संरचनात्मक स्तर पर विद्यमान हो, मानवों के बीच पदों के आधार पर दृष्टिगत होती है, उन्होंने नृत्य को एक रीति–रिवाज सबंधी कृत्य के रूप में स्वीकार किया।

उपरोक्त दोनों ही दृष्टिकोण से किये गये अध्ययनों के अवलोकन से यह बात स्पष्ट होती है कि नृत्य एक सामाजिक गतिविधि है जो लयात्मक रूप से प्रस्तुत की जाती है। समाज और सामाजिक संबंधों का अध्ययन करने वाले विज्ञान समाजशास्त्र में यह विधा उपेक्षित विषय रही। जिसका कारण नृत्य को लेकर समाज में व्याप्त सोच थी, जो नृत्य को अच्छा व सम्मानजनक कृत्य नहीं मानती थी।

नृत्य करने वाली नचनियाँ, गणिकाएँ अथवा वेश्यायें अथवा मदिरों की दासी ही नाच करती हैं। इसलिए यह सभ्य समाज में वर्जित एवं अमान्य था और आम राय भी, कि नाचना कोई अच्छा काम नहीं है।

आधुनिक परिप्रेक्ष्य

आज इस विधा को लेकर काफी सकारात्मक परिवर्तन हुए हैं। नृत्य भले ही पहले कुछ भी रहा हो, आज कला की एक सशक्त विधा है जिसे अब आजीविका के रूप में स्वीकृत किया जाने लगा है। समय के साथ ऐसे कला उद्धारक और कलाकार सामने आये जिन्होंने इस कला को न केवल सम्मान दिलाया बल्कि व्यवस्थित किया। परिणामस्वरूप विभिन्न सार्वजनिक स्थलों पर नृत्य का प्रदर्शन होने लगा है।

आधुनिक तकनीकी साधनों, विद्युत प्रकाश की नवीनतम् तकनीक से किये गये प्रयोगों से नृत्य एक नये कलेवर में निखरा है। इसकी बढ़ती लोकप्रियता नृत्य के शास्त्रीय, लोक और मिश्रित रूपों में दिखने लगी है। एक ओर शास्त्रीय नृत्य, लोक नृत्य ऊँचाइयों को छू रहे हैं वही दूसरी ओर हमारी रुचियों और मूल्यों में गिरावट ने नृत्य को भी अपनी चपेट में ले लिया है।

अतः आज आवश्यकता है कि कहीं हम उस मानसिकता के दौर में न पहुँच जायें कि नृत्य अच्छा सम्मानित कार्य नहीं है। इससे बचने के लिए इसके कलात्मक रूप को जन–जन तक पहुँचाया जाय तभी हम अपनी सामाजिक रूचि को परिष्कृत कर, इसे विकासोन्मुखी बना सकेंगे।

संदर्भ सूची

गुहा, अनोन्ना, (2012), *नृत्य की भूमिका और प्रकार्य, ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य.*

गर्ग, लक्ष्मीनारायण, (1967), *भारत के लोक नृत्य,* संगीत कार्यालय, हाथरस.

गुप्ता, सुषमा देवी, (2006), *भारतीय ललित कलाएँ एवं नृत्य कला,* प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली.

श्रीवास्तव, सुधा, (2002), *भारतीय संगीत के मूलाधार,* कष्णा ब्रदर्स, अजमेर.

उपाध्याय, भगवती शरण, (1980), *भारतीय कला की भूमिका* , पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.